ISSN: 2584-0231(Online)
International Journal of Multidisciplinary Research in Arts, Science and Technology
© IJMRAST | Vol. 2 | Issue 12 | December 2024
Available online at: https://ijmrast.com
DOI:https://doi.org/10.61778/ijmrast.v2i12.101

संस्कृत गद्य-वाङ्मय में अभिहित शिक्षापरक तथ्यों की समसामयिक प्रासंगिकता

अरुण कुमार चौबे[1], प्रोफ़ेसर (डॉ.) गीता त्रिपाठी[2]

[1] शोधार्थी, संस्कृत विभाग गनपत सहाय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सुल्तानपुर, विश्वविद्यालय - डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या, उत्तर प्रदेश।

[2] प्रोफ़ेसर, संस्कृत विभाग गनपत सहाय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सुल्तानपुर, विश्वविद्यालय - डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या, उत्तर प्रदेश।

Corresponding Author Email Id: educationalbook2@gmail.com

शोध-सारांशिका

*संस्कृत साहित्य में सर्जन कार्य के लिए दो विधियों का प्रयोग होता रहा है प्रथम- पद्य विधि तथा द्वितीय- गद्य-विधि इन विधियों का प्रारंभ मानव के बौद्धिक विकास के साथ ही होता गया। मानव जाति के विकास के अध्ययन का मूल स्रोत होने के कारण भारतीय वड्मय ग्रीक साहित्य के अपेक्षा कहीं अधिक उत्कृष्ट है।[1] संस्कृत पद्यमय विधि प्रारंभ वेदों में ऋग्वेद से तो, उसी प्रकार गद्यमय-विधि का प्राराभ यजुर्वेद से माना जाता है क्यों कि- यजुस् का मुख्य अर्थ ही है- '**यजुर्यजतेः**' अर्थात् यज्ञ सम्बन्धी मंत्रों को यजुस् कहते हैं। तथा '**इज्यतेऽनेनेति यजुः**' जिन मंत्रों से यज्ञ-यागादि किए जाते हैं तथा गद्यमय लक्षण भी इस प्रकार प्राप्त होता है-'**अनियताक्षरावसानो यजुः**' अर्थात् जिन मंत्रों में पयों के तुल्य अक्षर संख्या निर्धारित नहीं हो उसे गद्य-विधा कहते हैं।[2] पूर्वमीमांसा में तो यहाँ तक कह दिया गया है कि '**शेषेयजुः शब्दः**' अर्थात् पद्यबन्ध और गीत से रहित मंत्रात्मक रचना को यजुष् कहते हैं।[3] इस प्रकार हम अध्ययन करते हुए गद्य-विधा के उत्पत्ति के अत्यन्त नजदीक पहुँच जाते हैं।*

संस्कृत गद्य विधा का विस्तार क्षेत्र –

संस्कृत वैदिकी और लौकिकी साहित्यों में विस्तार की दृष्टि से संस्कृत गद्य विधा का एक लम्बी यात्रा रहा है। जिसके अनुसार यजुर्वेदी, अथर्ववेदीय तथा ब्राह्मण ग्रन्थों में गद्य, दर्शन ग्रन्थों में गद्य, आचार्यशङ्कर के गद्य और पौराणिक गद्य हैं। लौकिकगद्यों में संस्कृत व्याकरण के अन्तर्गत महर्षि पाणिनि और उनके समवर्ती वैयाकरण विद्वानों के सूत्रात्मक शैली का गद्य, तदनन्तर दण्डी, सुबन्धु, बाणभट्ट, धनपाल के अतिरिक्त चम्पूकाव्यों में प्राप्त होने वाले गद्यों का विकास नल-चम्पू अवन्तीसुन्दरी कथा तथा वल्लाल कवि द्वारा अभिहित गद्यों का अध्यन किया जा सकता है। कालान्तर में आधुनिक गद्यकारों ने भी गद्य-विधा को पर्याप्त गति प्रदान किया है। यथा पण्डित अधिकादत्त व्यास, पण्डिता क्षमाराव तथा हृषिकेश भट्टाचार्य आदि।

गद्यमय विधावों में वेद सर्वोत्तम एवं सर्वप्रथम गद्यात्मकग्रन्थ के रूप में हमारे समक्ष उपस्थित होते हैं। वेदों के गद्यों में अथवा लौकिक गद्यों में भी अनेकानेक उपदेश दिये गये हैं जो शिक्षात्मक स्वरूपों एवं उपदेशों से मानव आचार-व्यवहार में नवीन एवं ऊर्जावान् प्राण भरते दृष्टिगत् होते हैं और उसी रूप में सामाजसुधार तथा सामाज-नियमन हेतु आज भी मानवमात्र को सद्गति प्रदान करने हेतु प्रेरित करते रहते हैं। आज भी मानव उनके उपदेशों, शिक्षाओं का पालन करे तो सर्वोत्तम जीवन का छाप अपने पीछे छोड सकता है। प्रकृत शोध-पत्र में वैदिक और लौकिक दोनों हो विधाओं के गद्यों में प्राप्त होने वाले सदुपदेशों एवं शिक्षाओं पर प्रकाश डालता है। जो वर्तमान एवं अनागत काल के शोधादि कार्यों में सहायक बन सकता है।

विषय चयन का कारण

गद्यमय संस्कृत वाङ्मय का अध्ययनादि तो बहुशः होता रहा है, परन्तु उक्त गद्यविधा पर पर्याप्त कार्य होने पर भी मानव जीवन को तालीम सिखाने वाले अत्यन्त रोचक और अद्यतन प्रबुद्धवर्ग के अनुकूलताओं का संबल बनने वाले अनेक उपदेश तथा शिक्षाएं अभिहित हैं। इन उपदेशात्मक शिक्षाओं को संग्रहीत करने और शोधार्थी द्वारा उक्त क्षेत्र में विशेष अध्ययन में उत्पन्न रुचि तथा वैचारिक उद्बोध ही प्रकृत विषय के चयन में मुख्य कारण हैं। आचार्य दण्डी एवं बाणभट्ट जैसे मूर्धन्य विद्वानों का अध्ययन करने तथा उनके द्वारा अपने रचनाओं में पिरोई गयी सामाजिक विभिन्नताओं और कल्याणपरक उपदेशों के अध्यन के उपरान्त इस शोध-पत्र को प्रस्तुत करने का विचार प्रस्फुटित हुआ है।

औचित्य एवं महत्त्व

भारतीय गद्य साहित्य में अनेक उपदेश आज भी वैसे ही भरे पड़े हैं। किन्तु उनका व्यवहारात्मक पक्ष अत्यन्त न्यून है वे वैदिक गद्यमय उपदेश हों अथवा लौकिक गद्यमय शिक्षाएँ हों। प्रकृत शोध-पत्र के माध्यम से सुधीजन, पाठक अध्येताओं एवं इस दिशा में रुचि रखने वाले जिज्ञासुओं को अपने विचारों के माध्यम से व्यक्त करने हेतु अनेक बहुमूल्य उपदेशों को जोकि हमारे सर्वोत्कृष्ट ग्रन्थों वेदों आदि में अभिहित हैं। उनका सहारा लेते हुए मानवीय रुचियों को जागृत किया जा सकता है। इस कार्य से गद्य के क्षेत्र में लवांश भी उकार न हो पुनरपि प्रकृत शोध विषय संक्षिप्त रूप से अखिल वैदिक गद्यों के उपदेशात्मक तथ्यों पर प्रकाश डालता है जो सामान्य जनमास को किञ्चित् ही प्रभावित कर सकता है, इस अपेक्षा से इस शोध कार्य का महत्त्व एवं औचित्य परिलक्षित होता है।

शब्द सङ्केत- सदुपदेश, ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, गद्य-साहित्य, पद्य-साहित्य, रामायण, महाभारत, राष्ट्रीय शिक्षा नीति, भारतीय संविधान, शिक्षा का अधिकार, कल्याणकारी योजना, लचीला शासन व्यवस्था, न्यायव्यवस्था, सर्वजन हिताय, सर्वजन सुखाय, सर्वे भवन्तु सुखिनः, सामाजिक सौहार्द, भाईचारा, हितोपदेशा, पंचतंत्र, अर्थशास्त्र, मनुस्मृति आदि।

मुख्य-भाग- संस्कृत साहित्य में गद्य का प्रयोग अत्यन्त प्राचीन काल से होता आया है। प्राचीन काल में पद्यों के अपेक्षा गद्य को अधिक सम्मान प्राप्त था जिसके समर्थन में गद्य के विषय में एक उक्ति है- 'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति।' अर्थात् गद्य कवियों की कसौटी है क्यों कि गद्य रचना करते हुए ही कवि की परीक्षा होती है। गद्य को रसहीन, रुचिहीन समझा जाता है पुनरपि कवि को इस गद्य के द्वारा पाठक के हृदय में कौतूहलता, रोचकता उटपन्न करना होता है जो गद्यविधा के एकदम प्रतिकूल होता है पुनरपि कवि ऐसा करने में सफल होता है। इसीलिए सभी

विधाओं से आकर गद्य में प्रवेश करने पर ऐसा माना जाता है कि- कवि की परीक्षा गद्य रचना से ही होती है। ऐसा प्राय: माना जाता है कि गद्य रचना कठिन होता है। आचार्य बाणभट्ट ने तो ऐसी अनूठी रचना ही कर डाली जिसे कादम्बरी कहते ही हैं इसमें अनेक जीवन मूल्य के उपदेशात्मक शिक्षाएं व उपदेश भी कई वाक्यों के रूप में उपलब्ध हो जाते हैं तथा इसके लम्बे-लम्बे समासों के कारण सुधीजन के द्वारा इसे एक आभाणक प्रदान किया गया कि – 'कादंबरी समासों का जमघट है।' इस प्रकार कृष्णयजुर्वेद, ब्राह्मणग्रंथों, उपनिषद ग्रन्थों, निरुक्त प्रभृति ग्रन्थों से संस्कृत गद्य साहित्य की संवर्धनशील परम्परा उपलब्ध हुई तथा कालान्तर में अनेक टीकाओं, व्याख्याओं, कथा काव्यों, आख्यायिकाओं, चम्पूकाव्यों और नाटकादि में गद्य का प्रौढ रूप उपलब्ध होने लगता है। इतना ही नही तत्त्वज्ञान संबंधी दर्शन, विषयक ज्योतिषग्रन्थों और भाषा शास्त्र संबंधी व्याकरण के ग्रन्थों आदि में गद्य को विकसित होने की पूर्ण सुविधाएं प्राप्त हुयीं।

वेदों में धार्मिक, सांस्कृतिक, शास्त्रीय, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, भाषावैज्ञानिक, ऐतिहासिक, काव्यशास्त्रीय आदि अनेक प्रकार के उपदेशों और शिक्षाओं को उद्दीप्त करने वाले वाक्य, मंत्र, और सूक्तियाँ प्राप्त होते हैं। पुनरपि ऐतिहासिक गवेषणाओं से यह अनायास ही स्पष्ट होता है कि वैदिक साहित्य में संस्कृत गद्य के प्रारंभिक रूप दृष्टिगत होते हैं। कृष्णयजुर्वेद में पद्यबद्ध मंत्रों के साथ ही उनके विनियोग (प्रयोग) एवं याज्ञिक क्रियाओं की शाष्य एवं प्रशंसा करने वाला अंग गद्यमय ही है। अथर्ववेद के पन्द्रहवें तथा सोलहवें काण्डों में गद्यांश इस प्रकार प्राप्त होते हैं-

व्रात्यः आसीदीयमान एवांसः प्रजापतिः समैरयत। स प्रजापतिः सुवर्णमात्यन्न न पश्यत प्राजनयत।[4]

इन वाक्यों मंत्रों और सूक्तियों की आधुनिक महत्त्व सुधीजन को इतने मात्र से ही समझ आने लगता है कि उत्कृष्ट कोटि के संस्थानों, आयोगों, विद्यालयों, विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों, आदि का मुख्य वाक्य आज भी संस्कृत वाक्यों के रूप में उपलब्ध होते हैं इसका मुख्य कारण उन-उन संस्कृत सूक्तिवाक्यों में अर्थों की सारगर्भिता है जो जीवन के मूल्यों को अपने-आप में समेटे हुए हैं यथा- दिल्ली विश्वविद्यालय का स्लोगन (ध्येयवाक्य)– **'निष्ठा धृतिः सत्यं'**- अर्थात् 'सत्य में विश्वास धारण करना चाहिए।'[5] क्यों कि अन्ततः सत्य स्थिर रहता है सदा सत्य की विजय होता है। अशोकस्तम्भ के अधोभाग में लिखा है **'सत्यमेव जयते'** अर्थात् सदा सत्य की ही विजय होता है।[6] इसी प्रकार वायु सेना का स्लोगन **'नभः स्पृशं दीप्तं।**'[7] अर्थात्- वह परमात्मा आकाश और तेज रूप में है और अदृश्य है। इसी प्रकार अनेक उपदेशात्मक वाक्य उपलब्ध होते हैं। भले ही गद्यमय न हों यथा- **'यतो धर्मस्ततो जय:'**[8] अर्थात् – जहाँ धर्म होता है वहीं विजय होती है। ये अनमोल वाक्य आज भी सप्रसंग हैं। ये नैतिक शिक्षात्मक अथवा उपदेशात्मक वाक्यांश मानव जीवन पर जिस प्रकार प्राचीन काल में प्रभाव डालते रहे थे आज भी ठीक उसी रूप में प्रभाव डालते हैं। इन्ही वाक्यांशों को जनमानस के समक्ष प्रस्तुत करना प्रकृत शोध-पत्र का उद्देश्य है। क्यों कि इन उपदेशों से यदि प्रत्येक व्यक्ति अपना जीवन सदाचार युक्त बनाना प्रारम्भ करेगा तभी एक-एक करके संभवतः एक कमिक क्रियाविधि के परिणाम स्वरूप सर्वप्रथम एक व्यक्ति, तदनन्तर इसी क्रम में परिवार, समाज, ग्राम जिला (जनपद), खण्ड -प्रखण्ड, प्रदेश तथा देश का मानवमात्र सद्व्यक्ति बनकर उभरेगा जिससे हमारा देश सद्गति और सद्व्यवहार के पथ पर चलता हुआ एक वैश्विक आदर्श स्थापित कर सकेगा।

समस्त भारतीय वाङ्मय वेदों को प्रमाण मानता है। सभी धार्मिक कार्यों में वेदों की प्रामाणिकता अकाट्य मानी गयी है। महर्षि पतञ्जति ने भी निष्काम भाव से षड्वेदांगों का अध्ययन ब्राह्मण के लिए अनिवार्य है ऐसा व्याकरणमहाभाष्य के गद्य-भाग में उपदेशित किया है। जो आज के समाज के लिए अत्यंत उपयोगी साबित हो सकता है। 'महाजनो येन गताः स पंथा' के सिद्धान्तानुसार महर्षि पतञ्जलि के द्वारा बतलाये गये उपदेशों पर मानव अवश्य चलना चाहेगा, जिससे हमारे समाज का चारित्रिक विकास होगा जो कि प्रसंगोचित ही है। महर्षिय पतञ्जलि ने उपदेश दिया है कि-

"ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च।[9]

इस उक्ति के अनुसार ब्राह्मणों के लिए अर्थात् विद्वानों केलिए वेदाध्ययन अत्यंत अनिवार्य बतलाया गया था तथा वेदाध्ययन को परम् तप माना गया था। शास्त्रीय एवं दार्शनिक महत्त्व की दृष्टि से देखें तो 'सर्वज्ञानमयो हि सः।' वेदों को सभी विद्याओं का आधार माना जाता है। वेदों में दार्शनिक सिद्धान्त, राजनीति, समाजशास्त्र, अध्यात्म, मनोविज्ञान आयुर्वेद, गणित, अर्थशास्त्र, नाट्यशास्त्र, मनोविज्ञान आदि विविध कला का अनेक स्थानों पर पद्यमय के साथ गद्यमय वर्णन भी है। जैसे कि वेदों के आध्यात्म तथा दार्शनिक तत्त्वों को लेकर ही विविध उपनिषदों और दर्शनों की सृष्टि हुई अतएव समस्त प्राचीन वाङ्मय में वेदों के अध्ययन पर असाधारण बल दिया गया। प्राय: सभी उपनिषदें वेदों से ही सम्बद्ध हैं। तथा उपनिषदों की रचना-शैली की बात करें तो कुछ पद्यमय तो कुछ गद्यविधा में अभिहित हैं। साथ ही इनमें अनेक गद्यभाग ऐसे हैं जो सार्वकालिक प्रसंगित होने वाले कीमती प्राञ्जल ज्ञानमय उपदेश देते हैं जैसे-तैतिरीयोपनिषद में तो अनेक ऐसे गद्यमय वाक्यों के रूप में उपदेश और शिक्षा कि उपलब्धि होती है जिसको हमारी वर्तमान ही नहीं भूतकाल भी तो सदा उपयोग किया ही, भविष्यगत् पीढी भी उपयोग करते हुए लाभान्वित होता रहेगा वे कीमती गद्यमय उपदेश और शिक्षाएं इस प्रकार हैं- 'सत्यं वद। धर्मं चर। अध्यायान्माप्रमदः। मातृ देवोभव। पितृ देवो भव। अतिथि देवो भव। इत्यादि।[10]

वैदिक गद्यों में सन्देश -

वैदिक मंत्र-संहिताओं में वैदिक गद्य का प्राचीनतम रूप उपलब्ध होने लगता है तथा यजुर्वेद के शुक्ल साखा में परिमार्जित गद्य का परिदर्शन होता है। उस शुक्लयजुर्वेदीय संहिता कालीन गद्य की सादगीपूर्ण शिक्षात्मक पंक्तियाँ यहाँ दर्शनीय है -

"अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि, तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्। इद्महमनृतात् सत्यं उपैमि। कस्त्वा युनक्ति स त्वा युनक्ति तस्मै त्वा युनक्ति। कर्मणे वां वेषनय वाम्"[11]

यहाँ शुक्ल यजुर्वेदीय ऋषि उक्त गद्य में व्रतपति अग्नि की उपासना करते हुए अपनी-अपनी रक्षा हेतु संसार को अग्निव्रतादि का निर्देश कर रहा है। आज भी प्राचीन याज-यजन, उपासनादि तथावत् लाभप्रद तथा प्रसङ्गित हैं।

ब्राह्मण ग्रन्थों की सामग्री को मुख्यतया सुविधा की दृष्टि से दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम - विधि रूप, इसमें विशेष अनुष्ठानों के प्रदर्शन से सम्बन्धित निर्देश और चेतावनियाँ सामिल होती हैं। द्वितीय अर्थवाद इसमें मंत्रों और विशेष अनुष्ठानों के संबंध में व्याख्यात्मक गद्यमय टिप्पणियाँ सामिल हैं। तो कहीं कहीं आख्यानों के रूप में संवादात्मक वर्णन प्राप्त होता है यथा- **"हरिश्चन्द्रो ह वैधस ऐक्ष्वाको राजाऽपुत्र आस। तस्य ह पर्वतनारदौ गृह ऊषतु: स ह नारदं पप्रच्छ। स एकदा पृष्टो दशभिः प्रत्युवाच"**[12]

विधि का उदाहरण यथा- **"अमेध्यो वे पुरुषः, यदनृतं वदति तेन प्रतिस्ततः। मेध्या वा आपः। मेध्यो भूला व्रतमुपयानीति। पवित्रा वा आपः। पवित्रपूतो व्रतगुपयानीति। तत्मान्दा आपः उपस्पृशन्ति।"**[13]

यहाँ पर यह शिक्षा बहुमूल्य है कि वह विधि यह है कि इस यज्ञ में दीक्षित व्यक्ति पूर्व दिशा की ओर उन्मुख होकर आहवनीय एवं गार्हस्पत्य अग्नि के मध्य खड़ा होवे तथा जल का स्पर्श करे तदनन्तर ऋषि जलस्पर्श के कारण का शिक्षा देता है। स्पर्श का आधुनिक वैज्ञानिक कारण तो पवित्रता और स्वच्छता हेतु समझना चाहिए।

अर्थवाद का उदाहरण भी देखा जा सकता है जिसमें प्रशंसा के रूप में भी लोकव्यवहार के लिए बहुमूल्य शिक्षा (सीख) अनुस्यूत हैं- **"अमेध्यो वै पुरुषः, यदनृतं वदति मेध्या, वा आपः।"** इसी प्रकार ब्राह्मणसाहित्य के गद्य भागों में अनेक शिक्षाएं समाहित हैं। जिस पर आधुनिक जनसामान्य अमल करे तो एक लोककल्याण परक समाज स्थापित कर सकता है। उन ब्राह्मणों में कर्मकाण्ड की दृष्टि से पूर्ण होने के कारण शतपथ ब्राह्मण का अधिक महत्त्व है।

आरण्यक ग्रन्थों भी ब्राह्मण ग्रन्थों की तरह गद्य खण्डों अथवा गाद्यखंडों से भरे पूरे हैं जिनमें ज्ञानपरक शिक्षा के रूप में निर्देश, उपदेश, सावधानियों को प्रस्तुत किया गया है। ब्राह्मणों में यज्ञों के कर्मकाण्ड की प्रधानता होती है जबकि आरण्यकों में ज्ञान की प्रधानता होती है इसमे रहस्यात्मक सर्वोत्कृष्ट शक्तियों के बोरे में शिक्षित किया गया है इसीलिए इसे ज्ञानकाण्ड भी कहते हैं।

उपनिषदीय गद्यों की शिक्षाएं –

उपनिषदों में ईश्वर जीव, और प्रकृति के स्वरूप का वर्णन किया गया है और उनके पारस्परिक सम्बन्ध का स्वरूप बतलाया गया है फलतः इनमें ज्ञानमार्ग या, ब्रह्म प्राप्ति का उपदेश प्राप्त होता है। उपनिषदों का गद्य ब्राह्मणों की तरह सरल एवं मंसृण है यथा -

"नमो ब्राह्मणे। नमस्ते वायो। त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि। ऋतं वदिष्यामि। सत्यं वदिष्यामि। तन्मामवतु। तद्वक्तारमवतु। अवतु माम्। अवतु वक्तारम्॥"

इसमें समसामयिक लोकव्यवहार में व्यक्ति के आत्मज्ञानवर्धन के सन्देश प्राप्त होते हैं जो एक आदर्श जीवन का निर्माण करता है।

पौराणिक गद्य में अभिहित उपदेश-

प्राचीन भारतीय पुराणों का अधिकांश कलेवर पद्यमय है पुनरपि विष्णुपुराण और भागवत पुराण आदि में यत्र-तत्र गद्य भी उपलब्ध होता है। इसे हम पौराणिक गद्य कह सकते हैं। पौराणिक गद्यों में भारत के साथ ही साथ विश्व जनमानस को प्रभावित करने वाले अनेक शिक्षाप्रद आदेशों का निदर्शन होता है। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक संदर्भों में कल्याणकारी वर्णन प्राप्त होता है। संसार की असारता और परमात्म शिक्षा संबंधी शिक्षा की एक उदाहारण श्रीमद्भागवत महापुराण में देखा जा सकता है यथा -

"सांसर्गिको दोष एव नूनमेकस्यापि सर्वेषां सांसर्गिकाणां भवितुमर्हतीति निश्चित्य निशम्य कृपणवचो राजा रहूगण उपाशितवृद्धोऽपि निसर्गेण बलात्कृत ईशदुत्थितमन्युरवि स्पष्ट ब्रह्मतेजसं जातवेदसमिव रजसावृत्तमतिराह।"

इसी प्रकार अनेक पुराणों में गद्यभाग भी उपलब्ध होता है और वे अतुल्य उपदेशों का उद्गार करते हैं।

सूत्र-ग्रन्थों की उपदेशपरकता -

षड्वेदाङ्गों का विकास वैदिक कर्मकाण्डों के व्याख्या के अन्तर्गत ही हुआ, उन वैदिक कर्मकाण्डों से कल्प नामक वेदाङ्ग प्रत्यक्ष सम्बन्धित होता है। जिसका दो वर्गों में विभाजन किया जा सकता है। प्रथम श्रौत सूत्र, तो द्वितीय-गृह्यसूत्र। गद्य की संक्षिप्त शैली का दर्शन इन्ही सूत्र ग्रन्थों में सर्वप्रथम होता है। लम्बे-लम्बे वाक्यों को कम शब्दों में कहने की प्रवृत्ति बढ़ती गयी परिणामतः इसका सर्वोत्कृष्ट विकास महर्षि पाणिनि कृत अष्टाध्यायी में स्पष्ट होता है। इन्ही ग्रन्थों में गागर में सागर भरने का प्रयास किया गया। महर्षि पाणिनि का सम्पूर्ण अष्टाध्यायी ज्ञानार्जन की दृटि से अत्यन्त उपयोगी एवं शिक्षाप्रद ग्रंथ है।

भारतीय दर्शनों के प्रतिष्ठापक ग्रन्थों को भी इसी शैली में प्रणीत किया गया है जो गद्य का ही रूप है। सांख्य-योग, न्याय-वैशेषिक, मीमांसा और वेदान्त की शिक्षाएं तो भानव जीवन को धन्य बनाने के साथ ही साथ मुक्ति की ओर अग्रेषित करती हैं। और सर्वोत्तम जीवन निर्माण की तालीम देती हैं। यथा -

'अथ योगानुशासनम्।', 'तज्जपस्तदर्शभावनम्।'[14]

इसी प्रकार अन्य दर्शन ग्रन्थों के गद्यमय भागों में भी बहुमूत्य उपदेश अभिहित हैं।

महर्षि मास्क का निरुक्त जो वैदिक शब्दों का अर्थ समझाने के लिए सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है जो कि सूत्रशैली के गद्य भाग में ही वर्णित किया गया है। इसका एक शिक्षाप्रद उदाहरण इस प्रकार है- '**तिस्र एव देवता इति नैरुक्ताः। अग्नि पृथिवीस्थानः।वायुर्वाइन्द्रो वान्तरिक्षस्थानः।सूर्योद्युस्थानः। तासांमहाभाग्यादेकैकस्या अपि बहूनि नामधेयानि भवन्ति।अपि वा कर्म पृथक्त्वात्॥**[15]

लौकिक गद्यों में जीवन-मूल्यमय शिक्षाएं -

लौकिक संस्कृत के गद्य को अध्ययन की सुविधा हेतु दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। प्रथम भाग शास्त्रीय गद्य के अन्तर्गत उन गद्य भागों को रखा गया जब सूत्र ग्रन्थों के बाद कालान्तर में अत्यन्त संक्षेप के कारण उन्हें समझने में कठिनाई होने लगी तब उनके विस्तार या व्याख्या की आवश्यकता हुई फलस्वरूप ही प्रत्येक प्रतिष्ठापक सूत्रमय ग्रंथों पर भाष्य लिखे गये जो गद्य शैली का स्वरूप लिए हुए थे। इन भाष्य ग्रंथों में पतञ्जलि का महाभाष्य, जयन्तभट्ट का न्यायमञ्जरी, शबरस्वामी का मीमांसा भाष्य, शङ्कराचार्य का शारीरक (वेदान्त) भाष्य। इन भाष्यों के गहरा गंभीरता लिए हुए भी सुस्पष्ट हैं। इन वाक्यों में सारगर्भिता, पप्रौढ़ता, प्राञ्जलता की शिक्षा प्राप्त होती है। गद्यमय व्याकरण सूत्रों का महाभाष्य में किये गये भाष्य का सुन्दर संभाषण अथवा प्रश्नोत्तर शैली का रूप देते हुए वर्णन किया गया है यथा -

"शब्दानुशासनमिदानीं कर्तव्यं। तत्कथं कर्तव्यं कि शब्दोपदेशः कर्तव्य आहो स्विदपशब्दोपदेशः आहोस्तिदुभयोपदेशः? अन्यतरोपदेशेन कृतं स्यात् तद्यथा भक्ष्यनियमेनाभक्ष्य प्रतिरोधो गम्यते।"[16]

शङ्करभाष्य का एक गद्यवाक्य निर्देश करता है कि -

नाहि पद्भ्यां पलायितुं पारयमाणो जानुभ्यां रंहितुमर्हति। अर्थात् जो पैरों से चलने में समर्थ है उसे कष्ट से घुटनों के बल चलना शोभा नहीं देता। यह उक्ति अपने आप में एक गूढ़ तात्पर्यमय शिक्षा समाहित किए हुए है। इसी प्रकार वैद्यकशास्त्र, अलंकार शास्त्र और कौटिल्य के अर्थशास्त्र आदि शास्त्रीय ग्रन्थों में एक विशेष शैली का प्रयोग किया गया है। जिसके मुख्य विषय का विवेचन तो गद्यमय ही है। शास्त्रीय ग्रंथों का गद्य सूत्र शैली से पूर्णतया प्रभावित है।

द्वितीय लौकिक साहित्यिक गद्य के अन्तर्गत उन्हे रखा जा सकता है जिन्हे उपलब्ध ग्रंथों के आधार पर साहित्य या काव्यात्मक गद्य के रूप में देखा जा सकता है। इस गद्यलेखन की परम्परा दण्डी, सुबन्धु तथा बाणभट्ट से प्रारंभ हो जाता है। आगे चलकर विश्वेश्वर पाण्डेय, अम्बिकादत्त व्यास, हृषिकेशभट्टाचार्य, पण्डिता क्षमाराव, डॉ०रामशरण त्रिपाठी, धनपाल (10 वीं शती), वादीभसिंह, अगस्त्य (२० वीं शती) इत्यादि अर्धशतकाधिक गद्यलेखक हुए जिनमें से राजम्मा, सुन्दरावली, ज्ञानसुन्दरी जैसे महिला गद्य लेखिकाएँ भी हुई हैं। जो अपने रचनाओं से किसी न किसी प्रकार की शिक्षा जन-साधारण में वितरित किया है। इसी क्रम में महाकवि बाणभट्ट ने अपने गद्य रचनाओं में अनेक व्यावहारिक शिक्षाओं का उदद्गार किया है। महाकवि बाणभट्ट स्वयं अपने कादम्बरी नामक ग्रन्थ के शुक वर्णनम् के अन्तर्गत एक शाश्वत सत्य शिक्षण का प्रत्याख्यान गाद्यमय सूक्ति के माध्यम से कहते हैं कि-

"प्रायेण हि पक्षिणः पशवश्च भयाहार-मैथुननिन्द्रासंज्ञामात्र वेदिनो भवन्ति।"[17]

अर्थात् पशु और पक्षी प्रायः भयभीत हो जाना, भोजन करना, मैथुन क्रिया, निद्रा और संज्ञामात्र को ही समझ पाते हैं अन्य को वे मनुष्यों की तरह नहीं समझ पाते हैं। यह आधुनिक परिप्रेक्ष्य में भी एक व्यवहारप्रसिद्ध शिक्षा है।

महाकवि दण्डी ने भी अपने कृतियों में से दशकुमारचरित को गद्य-विधा में प्रणीत किया है। जिनमें राज्य, प्रजा, शासन व्यवस्था, षड्यन्त्रों एवं उनके सावधानियों के शिक्षा हेतु अनेक वाक्यों को समावेशित किया है। दशकुमारचरित 10 राजकुमारों के राजनैतिक एवं जीवन के प्रारम्भिक अवस्थितियों का चित्रांकन है। इसमें राजा के लिए शासन संचालन और प्रजा अर्थात् सामान्य जनजागरण के लौकिक व्यवहारगत शिक्षाएं भरी हुई हैं। जो प्राचीनकाल में वर्णित होने पर भी अद्यतन समाज पर तथावत घटित होती हैं और अद्यतन सामान्य जनमानस को शिक्षित करतीं हैं जिनका अवलोकन इस प्रकार किया जा सकता है –

महाकवि दंडी परवर्ती गद्य कवियों के गद्यलेखन के क्षेत्र में असामान्य पथप्रदर्शक हैं। उनकी गद्य कृतियाँ दशकुमारचरितं तथा अवन्तिसुन्दरी कथा तो उत्कृष्ट गद्यकाव्य के रूप में प्रतिष्ठित हैं। ये दोनों कृतियाँ प्राचीन एवं आधुनिक राजनीति के लिए मध्य की कड़ी की समान उक्त ग्रंथों में प्रतिष्ठित हैं। क्योंकि दंडी ने राजा के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहा है कि- 'राज्या के स्वरूप को लोकवंद्य, प्रेरणास्पद, असामान्य बनाने में विशिष्ट गुणों की मुख्य भूमिका होती है। क्योंकि राजा के विशिष्ट गुण उसके लिए आत्मसंपत होते हैं।'[18]

प्राचीन प्रशासनिक राजनीति के अंतर्गत सैन्यशक्ति का स्वरूप बतलाते हुए कहते हैं कि- दंड का राजशास्त्रीय तात्पर्य सैन्यशक्ति है। आचार्य दण्डी ने सैन्यसम्बन्धी विषयों का भी यथेष्ट परामर्श अपने गद्यकाव्य में किया है। मगधनरेश राजहंस एक ओर स्वयं वीरशिरोमणि हैं और दूसरी ओर वे वीर श्रेष्ठों का विश्वास अर्जित कर उनको अपने आश्रय में रखते हैं-

'तत्र भूपो बभूव। राजहंस के वीरभटपटलोत्तरंगतुरंगकुंजरमकरभीषण सैन्यबल के अन्तर्गत गजसेना एवं अश्वसेना भी थी यह तथ्य उक्त कथन से प्रकट होता है। आगे भी आया है कि 'ततः कदाचिन्नानायुधमहदायुधनैपुण्यरचितागण्यजन्यराजन्यमौलि चतुरंग- बलेन संयुतसंग्रामाभिलाषेण रोषेण महताविष्टो निर्ययौ।" अर्थात् राजा राजहंस जब मगध से मालवराजा मानसार पर आक्रमण करने के लिये निकले उस समय उनके पास स्वयं का अपरिमित पराक्रम, अनेकानेक महावीरों को परास्त कर देने की प्रख्याति, युद्धोपयोगी भेरी आदि वाद्य, दारुण प्रभावशाली अस्त्र-शस्त्र, युद्धोचित उत्साह तथा चतुरंगिणी सेना थी।[19]

दंड के स्वरूप का स्पष्टीकरण करते हैं कि दण्ड की अपरिहार्यता एवं दण्ड का औचित्य इन दोनों ही बातों पर विशेष प्रकाश डाला है-

'वाक्पारुष्यं दण्डो दारुणो दूषणानि चार्थानामेव यथावकाशमौपकारिकाणि ।

न हि मुनिरिव नरपतिरुपशमरतिरभिभवितुमरिकुलमलम्, अवलम्बितं च लोकतन्त्रम्।'

अर्थात् वाक्पारुष्य, कठोर ताडना आदि तथा धनहरण-इन तीनों दण्ड-प्रकारों से राजा के प्रयोजन उपकृत होते हैं।[20]

इस प्रकार निष्कर्षत: स्पष्ट होता है कि- दंडी द्वारा दशकुमारचरितं के माध्यम से उद्भावीत राजनीतिक शिक्षापरक तथ्य आधुनिक राजशास्त्र के लिए अत्यंत बहुमूल्य एवं उपयोगी है। अत: आधुनिक लोक व्यवहार के लिए प्राचीन गद्य ग्रंथों में उपदेशों एवं शिक्षाओं को शोध का विषय बनाना भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता के संरक्षण की ओर एक कदम होगा।

संदर्भ-सूची

[1]मैक्डानल, संस्कृत साहित्य का इतिहास, हिन्दी अनुवाद्, पृं. 5

[2]संस्कृत साहित्य का इतिहास-कपिलदेव द्विवेदी, पृ०54

[3] पूर्वमीमांसा- जैमिनि -2.1.37

[4] अथर्ववेद-काण्ड-15-1

[5] दिल्ली विश्वविद्यालय, ध्येय-वाक्य

[6]मुंडकोपनिषद् - 3.1.6

[7]श्रीमद्भगवद्गीता – 11.24

[8] महाभारत

[9] महाभाष्य – पष्पसाह्निक.1

[10] तैत्तिरीयोपनिषद्-शिक्षाध्याय

[11]शुक्ल यजुर्वेद, अध्याय 1 मं. 5-6

[12]ऐतरेय ब्राह्मण 7,3

[13] शतपथ ब्राह्मण

[14] योगसूत्र - 1.1.1

[15]निरुक्त 5.7

[16]महाभाष्य 1, 11

[17] कादम्बरी – बाणभट्ट, व्या. - डॉ० राजेन्द्र मिश्र, पृ० 149

[18] दशकुमारचरितं- 6.1, पृ.441-42

[19] दशकुमारचरितम्- पूर्व, 1, पृ.3

[20] दशकुचरितं - 8, पृ.623

Cite this Article

अरुण कुमार चौबे, प्रोफ़ेसर (डॉ.) गीता त्रिपाठी, "**संस्कृत गद्य-वाङ्मय में अभिहित शिक्षापरक तथ्यों की समसामयिक प्रासंगिकता**", *International Journal of Multidisciplinary Research in Arts, Science and Technology (IJMRAST), ISSN: 2584-0231, Volume 2, Issue 12, pp. 36-43, December 2024.*

Journal URL: *https://ijmrast.com/*

DOI: *https://doi.org/10.61778/ijmrast.v2i12.101*

This work is licensed under a Creative Commons Attribution-NonCommercial 4.0 International License.